Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

वैदिक साहित्य : एक परिचय

डॉ. सुजीत कुमार
असि. प्रोफसर, संस्कृत-विभाग, कर्मक्षेत्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इटावा, उत्तर-प्रदेश, भारत ।

सारांश - वैदिक साहित्य भारतीय धर्म, दर्शन और सांस्कृतिक धरोहर का आधार है। यह साहित्य चार वेदों पर आधारित है, जिन्हें प्राचीनतम धार्मिक और दार्शनिक ग्रन्थ माना जाता है। वैदिक साहित्य न केवल धार्मिक अनुष्ठानों का वर्णन करता है, अपितु जीवन, समाज और ब्रह्मांड के बारे में गहरे दार्शनिक विचारों को भी व्यक्त करता है।

मुख्य शब्द - सांस्कृतिक, दार्शनिक, धार्मिक, अनुष्ठान, संहिता, प्राचीनतम, संग्रह, अन्तोदात्त, आद्युदात्त, अभ्यर्हित,अभिधेयार्थ,श्रुति, निगम, आगम,त्रयी,छन्दस्, आम्नाय, स्वाध्याय, अनुष्ठानात्मक, रहस्य, सगुण, निर्गुण, ऋत्विक् एवं पुरोहित, होता,उद्गाता,अध्वर्यु, ब्रह्मा।

'वेद' शब्द विद् धातु से घञ् प्रत्यय करने पर बनता है, जिसका अर्थ ज्ञान होता है। अत: ज्ञान की राशि या ज्ञान संग्रह ग्रन्थ का नाम वेद है। वैदिक ग्रन्थों में वेद शब्द अन्तोदात्त और आद्युदात्त दो रूपों में पाया जाता है । इन दोनों शब्दों के अर्थों में अन्तर है। अन्तोदात्त शब्द 'दर्भमुष्टि' अर्थ में और आद्युदात्त शब्द ज्ञान अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद संहिता में असुन् प्रत्यान्त वेद: (वेदस्) शब्द अनेक बार आया है और भाष्यकारों द्वारा इस शब्द का अर्थ धन किया गया है। ज्ञान अर्थवाची ज्ञा और विद् दो धातुएं हैं, किन्तु दोनों के अर्थ में अन्तर है। भौतिक विद्याओं को ज्ञान और आध्यात्मिक विद्याओं को वेद कहा गया है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार वेद शब्द चार धातुओं से विभिन्न अर्थों में बनता है-

1. विद ज्ञाने- जानना।
2. विद विचारणे- विचारना।
3. विदलृ लाभे- प्राप्त करना।
4. विद् सत्तायाम् - होना।

वेद के इन चारों अर्थों को समन्वित रूप में कहा गया है -

सत्तायां विद्यते ज्ञाने, वेत्ति विन्ते विचारणे।

विन्दन्ति विन्दते प्राप्तौ,श्यन्लुक्श्नम्शेष्विदंक्रमात्।।

विष्णु मित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वर्गद्वयवृत्ति की प्रस्तावना में वेद का अर्थ किया है - ''**विद्यन्ते लभ्यन्ते एभिर्धर्मादि-पुरुषार्था इति वेदा:**''। अर्थात् जिसके द्वारा धर्मादि चारों पुरुषार्थ प्राप्त किये जाते हैं उसे वेद कहते हैं। आचार्य सायण ने भी धर्म, अर्थ,

काम, मोक्ष रूप पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति का परम साधन वेद को स्वीकार किया है- ''**अलौकिकं पुरुषार्थोपायं वेत्ति अनेन इति वेद शब्द निर्वचनम्**''। इस प्रकार वेद पुरुषार्थ चतुष्टय के सर्वांगीण विवेचन करने वाले ग्रन्थ हैं।

समस्त आध्यात्मिक और लौकिक ज्ञान का स्रोत वेद है। भारतीय विद्या के उत्स रूप में स्थित यह ज्ञान अभ्यर्हित है। यह भारत के ही नहीं, अपितु जगत् के प्राचीनतम साहित्य के रूप में आदि संस्कृति के ज्ञान का स्रोत है। व्याकरण 'वेद' शब्द का निर्वचन भाव अर्थ में (ज्ञान या जानना)न करके करण अर्थ में(ज्ञान का साधन)करते हैं- **''विद्यते ज्ञायतेऽनेनेति वेदः''।** अर्थात् जिसके द्वारा कोई ज्ञान प्राप्त किया जाय वही वेद है।

आचार्य सायण के अनुसार जो ज्ञान प्रत्यक्ष अथवा अनुमान द्वारा नहीं प्राप्त हो सकता उसका अवबोध वेद द्वारा हो जाता है- **प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न विद्यते। एतं विन्दन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता।।**

सायणाचार्य ने वेद के विषय में तैत्तिरीयभाष्यभूमिका में स्पष्ट कहा है-**''इष्टप्राप्त्यनिष्ट परिहारयोरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थों वेदयति स वेदः''।** अर्थात् जो ग्रन्थ अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति तथा अनिष्ट वस्तु के परिहार के लिए अलौकिक उपाय को बताता है वह वेद है । सायणाचार्य के इस लक्षण में वेद का अर्थ ज्ञान मूलक ही है। वास्तव में जो उपाय प्रत्यक्ष, अनुमान एवं अन्य प्रमाणों से ज्ञात नहीं किया जा सकता उनके लिए प्रबल प्रमाण वेद ही है- **'' धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः''।** तैत्तिरीय संहिता में वेद की व्युत्पति करते हुए कहा गया है - **''वेदेन वै देवा असुराणां वित्तं वेद्यमविन्दन्त तद् वेदस्य वेदत्वम्''।** वेद के द्वारा ही देवताओं ने असुरों की संपत्ति को प्राप्त किया, यही वेद का वेदत्व है ।

स्वामी दयानंद सरस्वती ने ज्ञान, सत्ता ,लाभ तथा विचार इन चार अर्थों को बतलाने वाली 'विद्' धातु से वेद शब्द की व्युत्पत्ति स्वीकार की है । इस धातु के 'करण' और 'अधिकरण' अर्थ में घञ् प्रत्यय करने से वेद शब्द सिद्ध होता है। इस प्रकार वेद शब्द का अर्थ है -जिससे सभी मनुष्य सभी सत्य विद्याओं को जानते हैं, जिससे सम्पूर्ण जगत् स्थित है, जिससे लौकिक तथा पारलौकिक सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं तथा जिससे ग्राह्य तथा त्याज पदार्थों का विचार किया जाता है, उसे वेद कहा जाता है।

इस प्रकार भारतीय परम्परा के अनुसार निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया है कि वेद शब्द का अभिधेयार्थ ज्ञान है तथा विश्व के सम्पूर्ण ज्ञान का उद्गम स्थान वेद ही है। वेद के स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वान् एक मत नहीं है। बौधायन गृह्यसूत्र में मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को ही वेद कहा गया है- **''मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्''**।आचार्य सायण ने भी मन्त्र और ब्राह्मण इन दोनों को वेद माना है- **''मन्त्रब्राह्मणात्मकः शब्दराशिर्वेदः''।** आचार्य जैमिनी ने मीमांसा सूत्रों में मन्त्र और ब्राह्मण को वेद मानकर उनकी प्रामाणिकता का प्रतिपादन किया है। पाश्चात्य विद्वान् विल्सन और ग्रिफिथ ने भी मन्त्रों को ही वेद स्वीकार किया है । इस विषय में मैक्समूलर महोदय का विचार उदारपूर्ण है । उनके अनुसार वेद का अर्थ मात्र संहिता नहीं बल्कि ब्राह्मण, आरण्यक ,उपनिषद् आदि वेद कहलाने की योग्यता रखते हैं । वास्तव में वैदिक युग के सम्पूर्ण साहित्य- संहिता,ब्राह्मण,आरण्यक , उपनिषद् को वैदिक साहित्य कहा जाना अधिक उपयुक्त है।

वैदिक साहित्य में वेद के लिए अनेक शब्द प्रयुक्त हुए हैं- श्रुति, निगम, आगम, त्रयी, छन्दस्, आम्नाय, स्वाध्याय आदि प्रमुख हैं। इन शब्दों से स्पष्ट हो जाता है कि वेद के वाचक अनेक शब्द कालान्तर में प्रयुक्त होने लगे थे। वेद ही विश्व ज्ञान का भण्डार है,मानव सभ्यता का दर्पण है और भारतीयों का परम पूज्य ग्रन्थरत्न है। इसीलिए इसे 'वेद भगवान' की संज्ञा प्राप्त हुई है।

वैदिक साहित्य को मुख्यत: चार भागों में बांटा गया है- संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्।

संहिता - वह ग्रंथ है जिसमें वेद मन्त्र संकलित किये गये हैं।

संहिता का अर्थ है - **"परः सन्निकर्षः संहिता"**। पदों के सन्धि आदि द्वारा समन्वित रूप। व्याकरण की दृष्टि में प्रयोग के योग्य पद समूह को संहिता कहा जाता है। इस दृष्टि से मन्त्र भाग को संहिता कहते हैं। वैदिक संहिताएं मुख्यत: चार हैं - ऋग्वेद संहिता, यजुर्वेद संहिता, सामवेद संहिता, अथर्ववेद संहिता। इन संहिताओं में परस्पर भेद यज्ञों में उपयोग के लिए संकलित मंत्रों के कारण था। सामान्य रूप से वैदिक यज्ञ में जो व्यक्ति पुरोहित के रूप में अनुष्ठान कराते थे उन्हें ऋत्विक् कहा जाता था। यह वैदिक युग के पुरोहितों की संस्था के रूप में प्रसिद्ध था जिसके चार वर्ग थे- होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा।

होता का कार्य यज्ञों में अर्पित हव्य को ग्रहण करने के लिए देवताओं का आवाहन करना था, जिससे देवता अपने प्रतीकात्मक रूप से आकर यज्ञ में अर्पित हव्य का ग्रहण करते थे।

उद्गाता का कार्य यज्ञों में संगीतात्मक ऋचाओं का विशेष पद्धति से गान करके देवताओं को प्रसन्न करना था। **अध्वर्यु** नामक ऋत्विक् का कार्य यज्ञ के अनुष्ठान का पूरा भार संभालना था। यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ऋत्विक् था क्योंकि यज्ञ के आरम्भ से लेकर परिचालन और समाप्ति तक सभी क्रिया-कलापों का संघटन-संयोजन इसी का कार्य था। इसके यज्ञ कार्य में प्रवृत्त होने के बाद ही अन्य ऋत्विकों का कार्य आरम्भ होता है।

ब्रह्मा कहा जाने वाला ऋत्विक् यज्ञ का निरीक्षण करता है ,सभी क्रियाओं के साक्षी के रूप में अनुमति देता है। वह अशुद्धियों का संशोधन, संकट का निवारण, भ्रम का समाधान आदि अनेक कार्य करता है, उसे तीनों वेदों में निपुण कहा गया है।

ऋग्वेद संहिता - जिस ग्रन्थ में विभिन्न ऋषियों द्वारा दृष्ट ऋक् मन्त्रों का संकलन किया गया है, उसे ऋग्वेद संहिता कहते हैं और इसके मन्त्रों को ऋचा कहते हैं। ये ऋचाएं चारों संहिताओं में प्राप्त होती हैं, फिर भी जिस संकलन में केवल ऋक् मन्त्रों का ही संकलन हो वही ऋक् संहिता है। यह ज्ञान एवं स्तुति प्रधान वेद है। यह सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण वेद है। इसमें दस मण्डल और 1028 सूक्त हैं । इसे होतृवेद भी कहते हैं।

यजुर्वेद संहिता - जिसमें यजुष् मन्त्रों की अधिकता हो साथ ही कतिपय ऋक् लक्षण युक्त मन्त्र भी गद्य रूप में पढ़े जाते हों,वह संकलन यजुर्वेद संहिता कहलाता है। यह कर्मकाण्ड संहिता है,इसके मन्त्रों को यजुष् कहते हैं। इसमें यज्ञों से सम्बन्धित मन्त्र और अनुष्ठानात्मक विधियाँ वर्णित हैं। इसे अध्वर्युवेद भी कहा गया है। इसका विभाजन सम्प्रदायों एवं अध्यायों में हुआ है। इसमें दो सम्प्रदाय एवं चालीस अध्याय हैं। इसके दो सम्प्रदाय- आदित्य एवं ब्रह्म हैं। आदित्य सम्प्रदाय का वेद शुक्ल यजुर्वेद और ब्रह्म संप्रदाय का वेद कृष्ण यजुर्वेद।

सामवेद संहिता- ऋचा और गान का समन्वय ही साम है। इसमें मुख्य रूप से यज्ञ-यागादि में गाये जाने वाले ऋग्वेद एवं साम मन्त्रों को संगीत के साथ गाने के लिए व्यवस्थित किया गया है। यह वेद भारतीय संगीत का प्रारम्भिक स्रोत माना जाता है। सामवेद को औद्गात्र वेद भी कहते हैं। यह उपासना प्रधान है। इसका विभाजन अर्चिकों में हुआ है- पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक ।

अथर्ववेद संहिता - जिस ग्रन्थ में शान्तिक तथा पौष्टिक कार्यों से सम्बनधित मन्त्रों का संकलन किया गया है, उसे अथर्ववेद संहिता कहा जाता है । अथर्ववेद के मन्त्रों को छन्दस् कहा गया है। इसका विभाजन काण्डों में हुआ है, इसमें कुल बीस

काण्ड हैं। इसे ब्रह्मवेद भी कहा गया है। भाष्यकार के अनुसार ऋग्वेद की इक्कीस, यजुर्वेद की एक सौ एक, सामवेद की एक हजार एवं अथर्ववेद की नव शाखाएं थीं, परन्तु आज कुछ ही उपलब्ध होती हैं। जैसे – ऋग्वेद की शाकल शाखा की संहिता, कृष्णयजुर्वेद की मैत्रायणी, तैत्तिरीय, कठ, कपिष्ठल।शुक्लयजुर्वेद की माध्यन्दिन,कण्व संहिता, सामवेद की कौथुमीय, राणायनीय, जैमिनीय आदि शाखाओं की संहिताएं प्राप्त होती हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थ- संहितागत मन्त्रों के व्याख्यापरक ग्रन्थ ब्राह्मण कहलाते हैं । ब्रह्मन् शब्द के अनेक अर्थ हैं – मन्त्र, यज्ञ, रहस्य तथा परमसत्ता। विश्वसाहित्य में यजुर्वेद को ही गद्य का जन्मदाता बताया गया है, किंतु उसका परिष्कार ब्राह्मण ग्रन्थों में हुआ है। सभी ब्राह्मण ग्रन्थ गद्यमय है। ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञ का विधान, साधन, अधिकारी आदि विषयों को सुलझाने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार ब्राह्मणों का प्राधान्य विवेच्य विषय है– विधि। सभी संहिताओं के पृथक्– पृथक् ब्राह्मण ग्रन्थ प्राप्त होते हैं– ऋग्वेदीय–शांखायन तथा ऐतरेय ब्राह्मण,शुक्लयजुर्वेदी–शतपथ ब्राह्मण, कृष्णयजुर्वेदीय – तैत्तिरीय ब्राह्मण,सामवेदीय ब्राह्मण– पञ्चविंश (ताण्ड्य, प्रौढ़,महाब्राह्मण), षड्विंश या अद्भुत ब्राह्मण,सामविधान ब्राह्मण,आर्षेय ब्राह्मण, देवताध्याय ब्राह्मण, मन्त्र या उपनिषद् ब्राह्मण, संहितोपनिषद् ब्राह्मण, वंश ब्राह्मण, जैमिनीय या तवलकार ब्राह्मण, जैमिनीय आर्षेय ब्राह्मण, जैमिनीय छान्दोग्योपनिषद् ब्राह्मण, अथर्ववेदीय ब्राह्मण – गोपथ ब्राह्मण।

ब्राह्मणों की विषय वस्तु के प्रसंग में दस प्रकारों की चर्चा शवर स्वामी ने की है –

हेतुनिर्वचनं निन्दा प्रशंसा संशयो विधि:।

परक्रिया पुराकल्पो व्यवधारण- कल्पना।

उपमानं दशैते तु विधयो ब्रह्मणस्य वै ।।

अर्थात् हेतु, निर्वचन, निन्दा, प्रशंसा, संशय, विधि, परक्रिया,पुराकल्प, व्यवधारण तथा उपमान ये ही दस बातें पायी जाती हैं।

आरण्यक ग्रन्थ- ब्राह्मण ग्रन्थों के पश्चात् आरण्यक ग्रन्थों का उद्भव नैसर्गिक प्रक्रिया के अनुरूप हुआ है, जिन ग्रन्थों का प्रणयन विशेष रूप से अरण्य में पढ़ने के लिए किया गया था, वे आरणण्यक कहलाये। आरण्यक शब्द का अर्थ है– अरण्य में होने वाला।(अरण्ये भवम् आरण्यकम्) अरण्य (वन) में होने वाले अध्ययन, अध्यापन, मनन, चिन्तन, शास्त्रीय चर्चा और आध्यात्मिक विवेचन आरण्यक के अन्तर्गत आते हैं । आचार्य सायण ने तैत्तिरीयारण्यक के भाष्य में व्यक्त किया है कि अरण्य में इसका पठन–पाठन होने से इसे आरण्यक कहते हैं – **अरण्याध्यायनादेतद् आरण्यकमितीर्यते। अरण्येतदधीयीतेत्येवं वाक्यं प्रवक्ष्यते।।**

आरण्यकों में आत्मविद्या, तत्त्व चिन्तन और रहस्यात्मक विषयों का वर्णन है। अत: आरण्यकों को रहस्य भी कहा गया है। गोपथ ब्राह्मण में 'सरहस्या' के द्वारा रहस्य शब्द से आरण्यकों का निर्देश है ।

आरण्यकों में यज्ञ का गूढ़रहस्य और ब्रह्मविद्या का प्रतिपादन है। आरण्यकों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय यज्ञ न होकर उसके अन्तर्गत विद्यमान आध्यात्मिक तथा दार्शनिक तत्त्वों की मीमांसा है । सामान्यत: आरण्यक गद्यात्मक है,किंतु ब्राह्मण ग्रन्थों के समान कहीं–कहीं इनमें पद्य भी मिलते हैं । ब्राह्मण ग्रन्थों की अपेक्षा आरण्यकों की संख्या बहुत कम है । अभी केवल छ: आरण्यक ग्रन्थ प्राप्त हैं। कुछ आरण्यक निश्चित रूप से ब्राह्मण ग्रन्थ के ही भाग हैं, जो वैदिक तत्त्वमीमांसा के अनुशीलन के लिए बड़े उपयोगी हैं– ऋग्वेदीयारण्यक – ऐतरेय, शांखायन, कृष्णयजुर्वेदीयारण्यक– तैत्तिरीय, मैत्रायणी, सामवेदीयारण्यक – तवलकार, छान्दोग्यारण्यक, अथर्ववेदीय कोई आरण्यक उपलब्ध नहीं है ।

इस प्रकार आरण्यकों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उपनिषदों में जो ज्ञानकाण्ड प्राप्त होता है, उनका प्रारम्भ आरण्यकों में ही हुआ है।

उपनिषद् ग्रन्थ- वेदान्त दर्शन के प्रस्थानत्रयी में उपनिषद् का सर्वप्रमुख स्थान है । यह उप + नि उपसर्ग पूर्वक सद् धातु क्विप् प्रत्यय से बनता है ।आचार्य शंकर उपनिषद् की व्युत्पत्ति व्याकरण के अनुसार ही स्वीकार करते हैं-उप+नि षदलृ धातु क्विप् प्रत्यय=उपनिषद् । उपनिषद् शब्द के तीन अर्थ हैं- विशरण(नाश), गति(प्राप्ति),अवसादन(अन्त)।अर्थात् वह ज्ञान जिससे अविद्या का नाश, आत्मज्ञान की प्राप्ति, दु:ख का अन्त होता है । उपनिषद् वैदिक साहित्य की चरमपरिणति रूप ग्रन्थ है । वैदिक साहित्य के अन्तिम ध्येय ब्रह्मत्त्व का निरूपण होने से इसे वेदान्त भी कहा गया है ।

उपनिषदों की संख्या के विषय में अनेक मत हैं, किंतु वेदों से सम्बन्धित उपनिषदों की गणना करने पर इनकी संख्या 108 प्राप्त होती है । ऋग्वेद से सम्बन्धित दस उपनिषद् , शुक्ल यजुर्वेद से सम्बन्धित उन्नीस, कृष्णयजुर्वेदसे सम्बन्धित बत्तीस, सामवेद से सम्बन्धित सोलह , अथर्ववेद से सम्बन्धित इकत्तीस हैं, जिन चौदह प्राचीन उपनिषदों की चर्चा होती है, उनमें दस महत्त्वपूर्ण हैं। उन पर शंकराचार्य ने भाष्य लिखा था,जो इस प्रकार है- ईश-केन- कठ-प्रश्न-मुण्ड- माण्डूक्य- तित्तिरि:। ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा।।

इन दसों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

ईशावास्योपनिषद् - यह कण्व तथा वाजसनेयी संहिता के चालीसवें अध्याय का शुक्लयजुर्वेदीय उपनिषद् है। इस अध्याय का नाम आत्मज्ञान है। इस अठारह मन्त्र वाले लघुकाय उपनिषद् में त्यागपूर्वक भोग, आत्मा का महत्त्व ,विद्या और अविद्या का सम्बन्ध एवं परमात्मा का स्वरूप वर्णित है ।

केनोपनिषद्- यह सामवेद की जैमिनीय शाखा के ब्राह्मण ग्रन्थ का नवम अध्याय है। यह चार खण्डों में विभक्त, जिसमें दो पद्यात्मक, दो गद्यात्मक हैं। इनमें क्रमश: ब्रह्म का निर्गुण ब्रह्म से अन्तर, रहस्यमय स्वरूप, परम शक्ति, सगुण - निर्गुण ब्रह्म का रहस्य बताया गया है ।

कठोपनिषद्- यह कृष्णयजुर्वेदीय कठ शाखा से संबंधित है। इसमें दो अध्याय, प्रत्येक अध्याय में तीन-तीन बलियां हैं। प्रथम अध्याय में नचिकेता के वरों का विवेचन तथा द्वितीय अध्याय में आत्मा की व्यापकता का निरूपण हुआ है ।

प्रश्नोपनिषद्- अथर्ववेदीय पैप्पलादशाखा से सम्बन्धित यह उपनिषद् गद्य में है, किन्तु कहीं-कहीं पद्य भी प्राप्त होते हैं । इसमें छ: खण्डों में छ: जिज्ञासु ऋषियों के छ: प्रश्नों का विचारपूर्ण उत्तर 'महर्षि पिप्पलाद' द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

मुण्डकोपनिषद्- तीन मुण्डको में विभक्त अथर्ववेद की शौनक शाखा से सम्बद्ध है । प्रत्येक मुण्डक दो-दो अध्यायों में विभक्त है । इसमें सृष्टि की उत्पत्ति तथा ब्रह्मतत्त्व का विवेचन किया गया है ।

माण्डूक्योपनिषद्- बारह मन्त्रों वाला अथर्ववेदीय यह गद्यात्मक उपनिषद् ओंकार की महिमा से प्रारम्भ तथा अन्त दोनों हुआ है ।

तैत्तिरीयोपनिषद् - कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा के तैत्तिरीयारण्यक के दस प्रपाठकों में से सप्तम से नवम तक को तैत्तिरीयोपनिषद् कहते हैं । इसमें तीन अध्याय हैं, जिन्हें क्रमश: शिक्षावल्ली, ब्रह्मानन्दवल्ली, भृगुवल्ली कहते हैं, जिनमें क्रमश: शिक्षा के महत्त्व का महात्म्य, ब्रह्मतत्त्व का निरूपण तथा वरुण द्वारा अपने पुत्र को दिया गया उपदेश संकलित है ।

ऐतरेयोपनिषद्- ऋग्वेदीय ऐतरेय ब्राह्मण के द्वितीयारण्यक के चतुर्थ,षष्ठ अध्यायों को ऐतरेयोपनिषद् कहा गया है। इसमें तीन अध्याय,जिसमें क्रमश: सृष्टि ,जीवात्मा तथा ब्रह्मतत्त्व का निरूपण है । इसका मूल आधार पुरुष सूक्त है और विश्व को आत्मा से उद्भूत कहा है ।

छान्दोग्योपनिषद् - यह सामवेदीय तवलकार शाखा के छान्दोग्यब्राह्मण के अन्तिम आठ अध्यायों के रूप में है,जिसमें अलग-अलग विषयों का विवेचन हुआ है ।

बृहदारण्योपनिषद्- शुक्लयजुर्वेद का अन्तिम छ: अध्याय ही बृहदारण्योपनिषद् है। यह तीन भागों तथा प्रत्येक भाग दो-दो अध्यायों में बंटा है । प्रथम भाग मधुकाण्ड है, द्वितीय भाग याज्ञवल्क्य काण्ड है, तृतीय भाग खिलकाण्ड है । इसमें प्राण को आत्मा का प्रतीक माना गया है।

वेदांग- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष् इन छ: शास्त्रों को वेदांग कहा गया है। वेदांग का अर्थ है- वेदस्य अंगानि, वेद के अंग ।अंग का अर्थ है- अंग्यन्ते ज्ञायन्ते एभिरिति अंगानि। अर्थात् वे उपकारक तत्त्व जिनसे वस्तु के स्वरूप का बोध होता है । प्रारम्भ में वेदांग स्वतन्त्र विषय न होकर वेदाध्ययन के विशिष्ट उपयोगी प्रकार थे । वेदों के शुद्ध पाठ, अर्थज्ञान, यज्ञों में मन्त्रों की उपयोगिता, यज्ञ के लिए उचित समय का ज्ञान तथा वेदी निर्माण की सही प्रक्रिया का ज्ञान वेदंगों से ही संभव है । पाणिनीय शिक्षा में कहा गया है कि ज्योतिष् वेदों के लिए आंख , निरुक्त कान, शिक्षा घ्राण,कल्प हाथ तथा छन्द पाद, व्याकरण मुख है -

छन्द:पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।

ज्योतिषामयनं चक्षुनिरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ।।

शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।

तस्मात्सांगमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते।।

अर्थात् जिस प्रकार आंख, कान, नाक, मुंह, हाथ तथा पद से शरीर में पूर्णता रहती है, उसी प्रकार इन षड्वेदांगों के अध्ययन से वेदाध्ययन में परिपूर्णता आती है। षड्वेदांगों का परिचय इस प्रकार से है -

शिक्षा- जिस शास्त्र में वर्ण, स्वर, मात्रा,बल, साम,सन्तान इन छ: विषयों का उपदेश हो उसे शिक्षा कहते हैं ।

कल्प - वैदिक शाखाओं के ब्राह्मण ग्रन्थों में विहित कर्मों का व्यवस्थित वर्णन करने वाला वेदांग कल्प कहा गया है। यह चार प्रकार का है - श्रौत सूत्र, गृह,सूत्र धर्म सूत्र, शुल्व सूत्र।

व्याकरण - मूलत: वैदिक भाषा के पदों की रचना के लिए इसका विकास हुआ, जो लौकिक संस्कृत की परिधि में आकर एक महत्त्वपूर्ण शास्त्र बन गया। व्याकरण के पांच मुख्य उद्देश्य- रक्षा,ऊह, आगम, लघु,असंदेह।

निरुक्त- वैदिक शब्दों का निर्वचन करने वाला वेदांग निरुक्त है। इसके पांच प्रतिपाद्य विषय है- वर्णागम,वर्णविपर्यय, विकार ,नाश और धातुओं का अनेक अर्थों में प्रयोग।

छन्द- वेद मन्त्रों का सही ढंग से पाठ हो सके इसके लिए छन्द ज्ञान की आवश्यकता है । छन्द से यह ज्ञान होता है कि मन्त्र का पाठ कितने अक्षर परिमाण में किया जाना चाहिए- **यदक्षरमपरिमाणं तच्छन्द:।**

ज्योतिष्- याज्ञिक विधि -विधान के लिए तिथि, नक्षत्र,पक्ष,मास, ऋतु आदि का ज्ञान ज्योतिष् से ही सम्भव

है। अत: इसका अध्ययन अपरिहार्य है।

इस प्रकार वेदों के समुचित ज्ञान के लिए वेदांगों का अध्ययन आवश्यक है। उक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि प्रत्येक वैदिक शाखा का अपना ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद् तथा वेदांग साहित्य भी था, जिसमें वैदिक साहित्य भारतीय संस्कृति और जीवन का आदिग्रन्थ है। इसमें न केवल धार्मिक और दार्शनिक विचारों का वर्णन है, बल्कि मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं का भी विवरण मिलता है। इसके अंतर्गत न केवल वेदों के विभिन्न वर्गों और उप-वर्गों को देख सकते हैं, बल्कि वेदों की संरचना, भाषा, समाज में उनके उपयोग, और उनके धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव पर भी विचार किया गया है। इसकी व्यापकता और गहरायी दुनिया के प्राचीनतम तथा सबसे महत्त्वपूर्ण साहित्यिक धरोहरों में से एक है।

सहायक ग्रन्थ सूची-

1. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति-डॉ. कपिलदेव द्विवेदी-विश्व विद्यालय प्रकाशन वाराणसी।
2. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास-डॉ.कपिलदेव द्विवेदी-रामनारायणलाल, विजयकुमार, कटरा इलाहाबाद।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास-उमाशंकर शर्मा ऋषि-चौखम्भा भारती अकादमी वाराणसी।
4. वैदिक सूक्त संग्रह-डॉ. विजय शंकर पाण्डेय-अक्षयवट प्रकाशन इलाहाबाद।
5. ईशावास्योपनिषद्-डॉ. तारणीश झा-रामनारायणलाल,बेनी माधव प्रकाशक, इलाहाबाद।
6. कठोपनिषद्- प्रो. आद्या प्रसाद मिश्र-अक्षयवट प्रकाशन इलाहाबाद ।
7. बृहदारण्योपनिषद्-गीता प्रेस गोरखपुर।
8. कठोपनिषद्-डॉ. रघुवीर वेदालंकार,वेदाचार्य-चौखम्भा ओरियन्टालिया प्राच्य-विद्या, आयुर्वेद एवं दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक दिल्ली।
9. पाणिनीयशिक्षा-डॉ. रमाशंकर मिश्र-चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
10. अष्टाध्यायी-श्रीगोपालदत्त पाण्डेय:-चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।